दिल्ली उच्च न्यायालय : नई दिल्ली

निर्णय तिथि: 20 फरवरी 2025

सि.वि.(मु) 252/2025 व सि.वि. आव. 7571/2025 रोक

CM(M) 252/2025 & CM APPL. 7571/2025 STAY

पिरामिड फिनमार्ट प्राइवेट लिमिटेड .....याचिकाकर्ता

द्वारा: श्री रवि कपूर और श्री समीर डावर, अधिवक्ता

बनाम

आर. के. सिन्हा एंड असोसिएट्स व अन्य

.... प्रत्यर्थीगण

द्वारा: श्री सुनील कुमार, वरिष्ठ अधिवक्ता सह श्री सौरभ एस. सिन्हा, श्री मृगांक प्रभाकर एवं श्री सिद्धार्थ साहू, अधिवक्तागण।

कोरमः

माननीय न्यायमूर्ति श्री रविंद्र डुडेजा

<u>निर्णय (मौखिक)</u>

<u>न्या. रविंद्र डुडेजा</u>

1. यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत एक याचिका है, जिसमें एकमात्र मध्यस्थ द्वारा "*मेसर्स आर. के. सिन्हा एंड एसोसिएट्स व अन्य*

बनाम मैसर्स पिरामिड फिनमार्ट प्राइवेट लिमिटेड व अन्य" शीर्षक वाली माध्यस्थम् कार्यवाही में पारित दिनांक 29.01.2025 के आदेश को चुनौती दी गई है।

2. मामले की संक्षिप्त तथ्यात्मक पृष्ठभूमि यह है कि याचिकाकर्ता कंपनी जो भूमि बिक्री, खरीद और निर्माण के व्यवसाय में लगी हुई थी, उनसे यमुना एक्सप्रेस राजमार्ग पर स्थित भूमि खरीदने के लिए प्रत्यर्थीगण द्वारा संपर्क किया गया था। याचिकाकर्ता संख्या 1 और प्रतिवादी संख्या 1 ने दिनांक 20.11.2018 को बेचने के लिए एक समझौता किया।

3. अनुबंध के निष्पादन के दौरान, पक्षकारों के मध्य कुछ विवाद उत्पन्न हुए। याचिकाकर्ता ने उच्च न्यायालय के समक्ष मध्यस्थ की नियुक्ति के लिए माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम की धारा 11(6) के तहत याचिका दायर की।

4. दिनांक 20.01.2022 के आदेश के अनुसार, पक्षकारों के मध्य विवादों के न्यायनिर्णयन हेतु एकमात्र मध्यस्थ नियुक्त किया गया था।

5. शिकायतकर्ता के साक्ष्य को बंद कर दिया गया था। याचिकाकर्ता ने साक्ष्य के रूप में दो शपथ पत्र दायर किए - प्र.सा.-1 द्वारा शपथपत्र दिनांकित 14.12.2024 तथा प्र.सा.-2 द्वारा शपथपत्र दिनांकित 12.01.2025। प्र.सा.1 याचिकाकर्ता के वरिष्ठ प्रबंधक है जबकि प्र.सा.-2 याचिकाकर्ता के निदेशक हैं।

6. दावेदार के विद्वान अधिवक्ता ने मध्यस्थ के समक्ष प्रस्तुत किया कि प्र.सा.-2 की परीक्षा और प्रतिपरीक्षा प्रथम साक्षी के रूप में आयोजित की जानी चाहिए।

7. दिनांक 29.01.2025 के आदेश के अनुसार, विद्वान मध्यस्थ का विचार था कि प्र.सा.-2 मामले में मुख्य गवाह है, और इसलिए, उससे प्रथम साक्षी के रूप में परीक्षा व प्रतिपरीक्षा की जानी चाहिए। विद्वान मध्यस्थ ने पाया कि प्र.सा.-1 लेन-देन में शामिल नहीं था। हालांकि, निर्देश जारी किया गया था कि दोनों साक्षी साक्ष्य हेतु निर्धारित तिथियों पर उपस्थित रहेंगे।

8. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि यह पक्षकार का एकमात्र विशेषाधिकार है कि वह उस अनुक्रम को निर्धारित करें जिसके द्वारा वह अपने साक्ष्य को प्रस्तुत करना चाहते हैं। यह आगे प्रस्तुत किया जाता है कि केवल याचिकाकर्ता कंपनी अनुबंध पर हस्ताक्षरकर्ता है और प्रतिवादी संख्या 3 न तो अनुबंध का पक्षकार था और न ही उसने प्रत्यर्थीगण संख्या 1 व 2 के साथ कोई माध्यस्थम् समझौता किया है। उन्होंने केवल याचिकाकर्ता कंपनी के निदेशक के रूप में समझौते पर हस्ताक्षर किए हैं न कि व्यक्तिगत क्षमता में।

9. यह आगे प्रस्तुत किया गया है कि याचिकाकर्ता कंपनी के कॉर्पोरेट आवरण को भेदने का कोई अवसर नहीं था क्योंकि कंपनी एक अलग और विशिष्ट इकाई है। यह भी तर्क दिया जाता है कि प्र.सा.-1 आनंद कुमार तिवारी ने

याचिकाकर्ता कंपनी की ओर से अभिकथनों पर हस्ताक्षर किए थे। प्र.सा.-1 याचिकाकर्ता कंपनी का अधिकृत हस्ताक्षरकर्ता है, और इसलिए, सि.प्र.सं. के आदेश 18 के नियम 3-क के प्रावधानों के अनुसार, यह प्र.सा.-1 था जिसकी पहले परीक्षा की जानी चाहिए न कि प्रत्यर्थी संख्या 3 की।

10. उनकी प्रस्तुतियों के समर्थन में, याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने निम्नलिखित निर्णयों पर दृढ़ता से भरोसा जताया हैः-

i. *संदर्भ में: आग्या बूरमाल्ट लिमिटेडः2 012 एससीसी ऑनलाइन सीएलबी 39।*
ii. *स्वरधर्मा स्वराज्य संघ बनाम इंडियन कॉमर्स एंड इंडस्ट्रीज कंपनीः 1997 एससीसी ऑनलाइन मद 766।*
iii. *बीओसी इंडिया बनाम जिंक उत्पादः 1996 एससीसी ऑनलाइन पट 563।*
iv. *मेसर्स निम्ब्रो बनाम नेशनल इंश्योरेंस कंपनीः 1990 एससीसी ऑनलाइन डेल 65।*
v. *यूनाइटेड बैंक ऑफ इंडिया बनाम नरेश कुमारः 1996 आईएनएससी 1073।*
vi. *स्टेट बैंक ऑफ त्रावणकोर बनाम किंग्स्टन कंप्यूटर इंडियाः (2011) 11 एससीसी 524।*
vii. *देवरपल्ली पट्टाभि रमैया बनाम डी. लक्ष्मी प्रसन्नाः 1997 एससीसी ऑनलाइन एपी 616।*
viii. *शेख रफथ बेगम बनाम टी. वी. आर. अंजनेयुलुः 2006 एससीसी ऑनलाइन एपी 691।*
ix. *सैदाई सा दुरैसामी बनाम स्टालिन एम केः 2016 एससीसी ऑनलाइन मद 23267।*
x. *सरबजीत सिंह बनाम गुरिंदर सिंह संधूः 2010:डीएचसी:5421.*

xi. *कुमुदिनी दामोदर मगर व अन्य बनाम भूषण दामोदर मगर व अन्यः 2004 (3) एमएच एलजे।*

11. शुरुआत में, प्रत्यर्थीगण संख्या 1 व 2 के विद्वान अधिवक्ता ने संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत दायर याचिका के सुनवाई योग्य होने पर कड़ी आपत्ति जताई है। माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम की धारा 5 व धारा 19 का उल्लेख करते हुए, यह प्रस्तुत किया जाता है कि संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत उपचार माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा पारित आदेश के विरुद्ध याचिकाकर्ता के लिए उपलब्ध नहीं है। अपनी प्रस्तुतियों के समर्थन में, विद्वान अधिवक्ता ने निम्नलिखित निर्णयों पर भरोसा जताया:-

i. *सांज दैनिक लोकोपचार व अन्य बनाम गोकुलचंद गोविंदलाल सनंदा 2019 (3) एमएचएलजे*
ii. *पंजाब स्टेट पावर कारपोरेशन लिमिटेड बनाम एमटा कोल लिमिटेड व अन्यः2021 आईएनएससी 523।*
iii. *एसबीपी एंड कंपनी बनाम पटेल इंजीनियरिंग लिमिटेड व अन्यः (2005) 8 एससीसी 618।*
iv. *सुरेंद्र कुमार सिंघल व अन्य बनाम अरुण कुमार भलोटिया व अन्यः 2021:डीएचसीः1097.*

12. याचिका के गुणागुण पर, यह प्रस्तुत किया जाता है कि प्र.सा.-2 मुख्य साक्षी है, क्योंकि यह वही है जिसने माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम की धारा 11 के तहत आवेदन दायर करके माध्यस्थम् कार्यवाही का अवलंब लिया था और वह धन की प्राप्ति का लाभार्थी भी है। यह आगे प्रस्तुत किया जाता है कि आदेश सि.प्र.सं. 18 के आदेश 3-क का प्रावधान अनिवार्य नहीं है,

लेकिन निर्देशिका और उक्त प्रावधान न्यायालय को विवेकाधिकार प्रदान करता है कि, जिन कारणों को दर्ज किया जाना चाहिए, पक्षकार को बाद में अपने स्वयं के साक्षी के रूप में उपस्थित होने की अनुमति दे।

13. माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा पारित आदेशों के विरुद्ध अनुच्छेद 227 के तहत उच्च न्यायालय की शक्ति के दायरे के संबंध में विधि सुस्थापित है। यह एक सुस्थापित विधि है कि उच्च न्यायालय माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा पारित आदेशों के विरुद्ध अनुच्छेद 227 के तहत शक्ति का प्रयोग कर सकता है, लेकिन यह समान रूप से सुस्थापित किया गया है कि ऐसे मामलों में न्यायिक हस्तक्षेप केवल न्यूनतम होना चाहिए और अनुच्छेद 227 का सहारा केवल असाधारण आत्यन्तिक रूपिस्थितियों में होना चाहिए जब यह दिखाया जाता है कि ऐसा आदेश पूरी तरह से विकृत है।

14. आईडीएफसी फर्स्ट बैंक लिमिटेड बनाम हिताची एमजीआरएम नेट लिमिटेड, मनु/डीई/4418/2023 के मामले में, इस न्यायालय की समन्वय न्यायपीठ ने उन परिस्थितियों प्रागणित की है जिनमें अनुच्छेद 227 के तहत याचिका पर विचार किया जा सकता है। उपरोक्त निर्णय का प्रासंगिक पैरा इस प्रकार हैः-

> "24. हालांकि इसमें कोई संदेह नहीं है कि माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा पारित आदेशों के विरुद्ध अनुच्छेद 226 व 227 के तहत एक उपाय उपलब्ध है, ऐसी चुनौतियों पर प्रत्येक मामले में विचार नहीं किया जाना चाहिए और न्यायालय को "अत्यंत सावधान" होना चाहिए।"

15. समान रूप से, सुरेंद्र कुमार सिंघल बनाम अरुण कुमार भलोटिया, मनु/डीई/0561/2021 के मामले में, इस न्यायालय ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत उच्च न्यायालय की शक्ति के दायरे को समझाते हुए कुछ सिद्धांतों को अभिकथित किया। निर्णय का प्रासंगिक पैरा इस प्रकार हैः-

> "24. उपर्युक्त निर्णयों के अवलोकन से पता चलता है कि अधिनियम की धारा 16 के तहत पारित आदेशों सहित माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा आदेशों को चुनौती देने में अनुच्छेद 226/227 के तहत हस्तक्षेप के दायरे के संबंध में निम्नलिखित सिद्धांत सुस्थापित किए गए हैं:
>
> i. एक माध्यस्थम् अधिकरण एक अधिकरण है जिसके विरुद्ध अनुच्छेद 226/227 के तहत एक याचिका सुनवाई योग्य होगी।
> ii. अधिनियम की धारा 5 में सर्वोपरि खंड अनुच्छेद 227 के तहत शक्तियों के प्रयोग के संबंध में लागू नहीं होता है जो एक संवैधानिक प्रावधान है।
> iii. अनुच्छेद 226/227 के तहत हस्तक्षेप हेतु 'असाधारण परिस्थितियां' होनी चाहिए।
> iv. हालांकि हस्तक्षेप की अनुमति है, जब तक कि आदेश इतना विकृत नहीं है कि इसमें निहित अधिकारिता का अभाव है, तब तक रिट न्यायालय हस्तक्षेप नहीं करेगा।
> v. हस्तक्षेप की अनुमति केवल तभी दी जाती है जब आदेश पूरी तरह से विकृत हो अर्थात विकृति स्पष्ट रूप से दिखाई देनी चाहिए।
> vi. उच्च न्यायालयों को ऐसी मुकदमेबाजी को हतोत्साहित करना चाहिए जो अनिवार्य रूप से माध्यस्थम् प्रक्रिया में हस्तक्षेप करते हैं।
> vii. माध्यस्थम् प्रक्रिया में अत्यधिक न्यायिक हस्तक्षेप को प्रोत्साहित नहीं किया जाता है।
> viii. यह विवेकपूर्ण है कि अनुच्छेद 226/227 के तहत अधिकारिता का प्रयोग न किया जाए।
> ix. शक्ति का प्रयोग 'असाधारण दुर्लभता' में किया जाना चाहिए या यदि 'असद्भाव' दिखाया गया है।

x. माध्यस्थम् प्रक्रिया की दक्षता को कम नहीं होने दिया जाना चाहिए और इसलिए माध्यस्थम् प्रक्रिया को बाधित करने से पूरी तरह से बचना चाहिए।"

16. सुरेंद्र कुमार सिंघल (पूर्वोक्त) में पारित आदेश को चुनौती देने वाली अपील की विशेष अनुमति (6171/2021 के रूप में संख्यांकित) को माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने दिनांक 27.04.2021 के आदेश के माध्यम से खारिज कर दिया है।

17. **केल्विन एयर कंडीशनिंग एंड वेंटिलेशन सिस्टम प्राइवेट लिमिटेड सि.वि.(मु) 3592/2024, 2024 डीएचसी 4914** में इस न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया:-

"11. यह न्यायालय इस तथ्य से अत्यंत अवगत है कि वर्तमान याचिका भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत दायर की गई है जिसके तहत न्यायालय को अपनी पर्यवेक्षी शक्तियों का प्रयोग करने की आवश्यकता है। पर्यवेक्षी न्यायालय का कर्तव्य यह है कि वह निषिद्ध करें यदि वह पाते हैं कि निष्कर्ष विकृत हैं अर्थात (i) महत्वपूर्ण साक्ष्य पर विचार न करने के कारणवश त्रुटिपूर्ण हैं, या (ii) निष्कर्ष जो साक्ष्य के विपरीत हैं, या (iii) उन निष्कर्षों पर आधारित हैं जो विधि में अस्वीकार्य हैं। पुरी इन्वेस्टमेंट्स बनाम यंग फ्रेंड्स एंड कंपनी, 2022 एससीसी ऑनलाइन एससी 283 का संदर्भ लिया जाए।"

12. इस न्यायालय ने सि.वा.(मु) 3265/2024 में अग्रवाल एसोसिएट्स (प्रमोटर) लिमिटेड बनाम शारदा डेवलपर्स शीर्षक से पारित आदेश में यह भी पाया है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत उपलब्ध उपचार माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 5 के सर्वोपरि खंड द्वारा रद्द नहीं किया जाता है, जो प्रावधान करता है कि कोई भी न्यायिक

प्राधिकरण हस्तक्षेप नहीं करेगा, सिवाय इसके कि जहां ऐसा प्रदान किया गया है और इसलिए, हालांकि याचिका सुनवाई योग्य होगी, लेकिन तथ्य यह है कि हस्तक्षेप का दायरा बहुत कम है।"

18. इसी तरह, **एसबीपी एंड कंपनी बनाम पटेल इंजीनियरिंग लिमिटेड व अन्य (2005) 8 एससीसी 618** के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने पैरा सं. 45 व 56 में उचित टिप्पणियां की जो निम्नवत उद्धृत की गई हैं:-

> "45. यह देखा गया है कि कुछ उच्च न्यायालयों ने इस आधार पर कार्यवाही की है कि माध्यस्थम् के दौरान माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा पारित किसी भी आदेश को भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 या 227 के तहत चुनौती दी जा सकती है। हम इस तरह के दृष्टिकोण के लिए कोई औचित्य नहीं देखते हैं। धारा 37 माध्यस्थम अधिकरण के कतिपय आदेशों को अपील योग्य बनाती है। धारा 34 के तहत, व्यथित पक्षकार के पास अधिनियम की धारा 16 के तहत कार्य करने वाले माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा पारित किए गए किसी भी आदेश सहित पंचाट के विरुद्ध अपनी शिकायतों को उजागर करने का एक तरीका है। माध्यस्थम् अधिकरण के किसी भी आदेश से व्यथित पक्षकार को, जब तक कि अधिनियम की धारा 37 के तहत अपील करने का अधिकार न हो, तब तक प्रतीक्षा करनी होगी जब तक कि अधिकरण द्वारा निर्णय पारित नहीं हो जाता। यह अधिनियम की योजना प्रतीत होती है। आखिरकार, माध्यस्थम् अधिकरण पक्षकारों के मध्य एक अनुबंध, माध्यस्थम् समझौते का निर्माण है, भले ही अवसर उद्भूत हो, मुख्य न्यायाधीश पक्षकारों के मध्य अनुबंध के आधार पर इसका गठन कर सकता है। लेकिन इससे माध्यस्थम् अधिकरण की स्थिति नहीं बदलेगी। यह अभी भी पक्षकारों द्वारा समझौते द्वारा चयनित एक फोरम होगा। इसलिए, हम कुछ उच्च न्यायालयों द्वारा अपनाए गए इस रुख को अस्वीकार करते हैं कि माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा पारित कोई भी आदेश भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 या 227 के तहत उच्च न्यायालय द्वारा सही किए जाने में सक्षम है। उच्च न्यायालयों द्वारा इस तरह के हस्तक्षेप की अनुमति नहीं है।

> 46. न्यायिक हस्तक्षेप को कम करने का उद्देश्य, जबकि मामला माध्यस्थम् की प्रक्रिया में है, निश्चित रूप से विफल हो जाएगा यदि उच्च न्यायालय से भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत या भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा दिए गए प्रत्येक आदेश के विरुद्ध संपर्क साधा जा सकता है। इसलिए, यह इंगित करना आवश्यक है कि एक बार माध्यस्थम् अधिकरण में माध्यस्थम् शुरू हो जाने के बाद, पक्षकारों को तब तक प्रतीक्षा करनी होगी जब तक कि पंचाट घोषित नहीं किया जाता है, जब तक कि निश्चित रूप से, अधिनियम की धारा 37 के तहत उनके लिए अपील का अधिकार उपलब्ध नहीं है।"

19. यह कोई विवादित तथ्य नहीं है कि प्र.सा.-2 वही है जिसने मध्यस्थ की नियुक्ति के उद्देश्य से माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम की धारा 11 का अवलंब लिया था। बहस के दौरान यह विवादित नहीं है कि प्र.सा.-2 को पैसा मिला था। आक्षेपित आदेश के माध्यम से विद्वान मध्यस्थ का विचार रहा है कि प्र.सा.-2 मामले में मुख्य साक्षी है। भले ही उन्होंने प्र.सा.-2 से पूछताछ करने और प्रथम साक्षी के रूप में परीक्षा व प्रतिपरीक्षा करने का निर्देश दिया, लेकिन उन्होंने प्र.सा.-1 के शपथ पत्र को खारिज नहीं किया और वास्तव में दोनों साक्षियों को अपने साक्ष्य के लिए निर्धारित तिथि पर उपस्थित रहने का निर्देश दिया।

20. सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 18 नियम 3-क में निहित प्रावधान निर्देशात्मक हैं और अनिवार्य नहीं हैं और वैध कारणों से अपवाद किए जा सकते हैं। वे वैध कारण क्या है, यह प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करता है।

21. आक्षेपित आदेश के अवलोकन से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि यह किसी भी विकृति से ग्रस्त नहीं है, और इसलिए, इस न्यायालय को आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं मिलता है।

22. **वि.अ.या. (सि) सं. 13941/2021 से उद्भूत मेसर्स गारमेंट क्राफ्ट बनाम प्रकाश चंद गोयल** के मामले में, उच्चतम न्यायालय ने संविधान के अनुच्छेद 227 के दायरे को समझाते हुए पाया कि पर्यवेक्षी अधिकारिता तथ्य की हर त्रुटि या यहां तक कि एक विधिक दोष को ठीक करने के लिए नहीं है जब अंतिम निष्कर्ष उचित है या समर्थित किया जा सकता है। उच्च न्यायालय को तथ्यों और निष्कर्षों पर अपने स्वयं के निर्णय को निचले न्यायालय या अधिकरण के लिए प्रतिस्थापित नहीं करना है। अनुच्छेद 227 के तहत शक्ति का प्रयोग केवल उपयुक्त मामलों में ही किया जाता है।

23. चूंकि अनुच्छेद 227 के तहत शक्ति का प्रयोग करते हुए, यह न्यायालय माध्यस्थम् अधिकरण के आदेशों पर अपील में नहीं बैठता है, भले ही न्यायालय को विपरीत दृष्टिकोण अपनाना हो, संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत पर्यवेक्षी शक्ति का प्रयोग करते हुए आक्षेपित आदेश को अपास्त नहीं किया जा सकता है, और विशेष रूप से, माध्यस्थम् कार्यवाही के संदर्भ में जहां हस्तक्षेप न्यूनतम होना चाहिए।

24. मेरे विचार में, यह विद्वान माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा पारित आदेश में न्यायिक हस्तक्षेप हेतु एक उपयुक्त मामला नहीं है।

25. इसलिए, न्यायालय को वर्तमान याचिका में कोई गुणागुण नहीं मिलता है। तदनुसार इसे खारिज किया जाता है।

रविंद्र डुडेजा, न्या.

20 फरवरी, 2025
आरएम

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा| समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*